IOSR Journal of Humanities and Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 25, Issue 2, Series 1 (February, 2020) 89-93
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

रघुवीर सहाय के काव्य में लोकधर्मी चेतना

डॉ0 अजय सिंह चौहान,
असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी विभाग
फीरोज़ गांधी कॉलेज रायबरेली

सारांश
साहित्य समाज की सांस्कृतिक चेतना, जीवन-मूल्यों, परंपराओं और लोकानुभूतियों का सशक्त अभिव्यक्ति माध्यम है। किसी भी साहित्य की वास्तविक सार्थकता उसके लोकजीवन से जुड़ाव में निहित होती है। लोकजीवन में प्रचलित रीति-रिवाज, धार्मिक मान्यताएँ, लोकविश्वास, लोकगीत, लोककथाएँ, पर्व-त्योहार तथा प्रकृति से संबंधित धारणाएँ लोकसंस्कृति के विविध आयामों को उद्घाटित करती हैं। इन्हीं जीवनानुभूतियों और सांस्कृतिक परंपराओं के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण को लोकधर्मी चेतना कहा जाता है। हिंदी साहित्य में लोकधर्मी चेतना की परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। आधुनिक हिंदी कविता में रघुवीर सहाय का काव्य इस दृष्टि से विशेष महत्त्व रखता है। उनकी कविताओं में लोकजीवन के विविध संदर्भों के साथ-साथ जनसामान्य के विश्वासों, आस्थाओं, सामाजिक व्यवहारों और सांस्कृतिक परंपराओं का सहज चित्रण मिलता है। कवि ने सूर्य, चंद्रमा, नदियों, वृक्षों, पशु-पक्षियों, ऋतुओं, कृषि-कर्म तथा पर्व-त्योहारों से जुड़े लोकविश्वासों को अपनी काव्य-संवेदना का विषय बनाया है। इन लोकमान्यताओं के माध्यम से उनकी कविताएँ भारतीय जनजीवन की सांस्कृतिक विरासत और सामूहिक स्मृतियों को अभिव्यक्त करती हैं। प्रस्तुत शोधालेख में रघुवीर सहाय की कविताओं में अभिव्यक्त लोकधर्मी चेतना के विविध स्वरूपों का विश्लेषण करते हुए यह समझने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार कवि ने लोकविश्वासों एवं परंपराओं को आधुनिक काव्यबोध से जोड़कर उन्हें नवीन अर्थवत्ता प्रदान की है।

बीज शब्द (Key Words): *लोकधर्मी चेतना, लोकजीवन, लोकसंस्कृति, लोकविश्वास, लोकपरंपराएँ, लोकसाहित्य, लोकानुभूति, लोकाचार, लोकगीत, लोककथाएँ, ग्रामीण परिवेश, प्रकृति चित्रण, सांस्कृतिक चेतना, जनसामान्य, रघुवीर सहाय।*

प्रस्तावना :

लोक शब्द संस्कृत के लोकदर्शने धातु से घञ् प्रत्यय लगाकर निष्पन्न होता है। इस धातु का अर्थ 'देखना' है, जिसका लट्लकार के अन्य पुरूष के एक वचन का रूप 'लोकते' है। अतः लोक शब्द का अर्थ हुआ देखने वाला। इस प्रकार वह समस्त जनसमुदाय जो इस कार्य को करता है लोक कहा जा सकता है। लोक शब्द से ही हिन्दी शब्द 'लोग' की उत्पत्ति मानी जाती है, जिसका तात्पर्य है सर्व साधारण जनता। अतः लोक शब्द का अभिप्राय उस समस्त जन समूह से है जो किसी देश में निवास करता है।

'लोकधर्मी' दो शब्दों से मिलकर बना है—'लोक' और 'धर्मी'। लोक का अर्थ है सामान्य जनसमुदाय तथा धर्मी का अर्थ है किसी विशेष प्रवृत्ति या स्वभाव से युक्त होना। इस प्रकार लोकधर्मी चेतना का अर्थ है—जनसामान्य के जीवन, हितों, सुख-दुःख, श्रम, संघर्ष और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण।ग्रामीण जीवन, लोकभाषा, लोकगीत, लोककथाएँ एवं लोकपरंपराएँ इसकी आधारभूमि हैं।

आज लोक शब्द इह लोक के अर्थ में प्रयोग होने लगा है। इस सम्बन्ध में डॉ० बच्चन सिंह ने लिखा है "लोकधर्म कहने से लोक का अर्थ जन सामान्य हो जाता है। लोक में सत्य असत्य दो पक्ष होते हैं दोनों को ध्यान में रखते हुये लोक में सुख शान्ति की व्यवस्था करने की प्रवृत्ति लोकधर्म है। जनता की प्रवृत्तियों का औसत निकालने पर धर्म का जो मान निर्धारित होता है वहीं लोकधर्म है।" [1]

लोक चेतना का साहित्य अपनी मूल प्रेरणा लोक साहित्य से ग्रहण करता है किन्तु इसका ऊपरी ढांचा साहित्य की शास्त्रीय मान्यताओं पर आश्रित होता है। ऐसे सभी प्राचीन विश्वासों, प्रथाओं और परम्पराओं का सम्पूर्ण योग जो सभ्य समाज के अल्प शिक्षित लोगों के बीच आज तक प्रचलित है फोकलोर है। इसकी परिधि में परियों की कहानिया, लोकानुभूतियां, पुराण-गाचाएं,

अंध-विश्वास, उत्सव रीतियां, परम्परागत खेल या मनोरंजन, लोकगीत, प्रचलित कहावतें, कला-कौशल, लोक नृत्य और ऐसी अन्य सभी बातें सम्मिलित की जाती है।

रवीन्द्र भ्रमर ने लिखा है कि "लोक साहित्य लोक मानव की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। लोक का प्राणी नाना प्रकार के परम्परा-पृथित रीति-रिवाजों का दास होता है। समाज से अलग रहकर वह अपने स्वतंत्र अस्तित्व की कोई कल्पना नहीं कर सकता। प्रतिदिन के जीवन में ही कर्म से प्रारम्भ करके स्नान, खान-पान, वृत-उपवास और शयन आदि तक की अनेक रूढ़िग्रस्त रीतियां होती है। लोक मानव इनसे पदे पदे चालित होता रहता है।" [2]

लोक विश्वासों के अन्तर्गत सूर्य के संबंध में लोक में तमाम विश्वास प्रचलित हैं। जैसे कि सूर्य का अपने रथ पर चलना, उसका सारथी होना इत्यादि। रघुवीर सहाय की कविताओं में इस प्रकार के वर्णन देखे जा सकते हैं-

"खिंचा चला जाता है दिन का सोने का रथ ऊँची-नीची भूमि पार कर"।[3]

खेत, खलिहानों और गाँवों के मध्य सूरज का डूबना लोक सौन्दर्य की एक सुन्दर झांकी प्रस्तुत करता है -

"कल संध्या सूरज डूब गया था पश्चिम में अपने प्रकाश से गरूवाकर चुपचाप खेत घर ग्राम नगर सड़के गलियों सब खड़ी रहीं।[4]

चन्द्रमा से सम्बन्धित लोक विश्वासों को भी रघुवीर सहाय ने अपनी कविताओं का वर्ण्य विषय बनाया है। जहां सूर्य का स्वभाव ज्वलनशील है यहीं चन्द्रमा का स्वभाव शीतलता व शान्ति प्रदान करने वाला है। कृष्ण पक्ष से शुक्ल पक्ष की यात्रा में चंद्रमा विभिन्न आकारों-प्रकारों में दिखता है कभी गोला तो कभी नुकीला

"कितनी बार चुभा होगा घन उर में चांद नुकीला
बादल ने समझा होगा इसी को परिणय लीला।"[5]

"कृष्णदेव उपाध्याय लिखते हैं कि "लोक साहित्य में चंद्रमा से संबंधित अनेक लोक कथाएं प्रसिद्ध है। चंद्रमा बच्चों का मामा लगता है। अतः भोजपुरी माताएं अपने छोटे बच्चों को चाना-माना कहकर गीत गा-गा कर उनके लिऐ निद्रा देवी का आवाहन करती हैं।"[6]

रघुवीर सहाय भी चंदा को मामा कहकर पुकारते हैं-

"अब आते ही होंगे बायू अब लाते ही होगें रोटी रो मत मेरे बच्चे वो देखो चंदा मामा हंसते हैं"।[7]

उल्का पिंडों के संबंध में यह लोक विश्वास है कि आकाश में स्थित छोटे-छोटे पिंड जो टूट-टूट कर जमीन पर गिरते रहते हैं उन्हें उल्का कहा जाता है। भारतवर्ष में उल्कापात, भूकप, दुर्भिक्ष, समुद्री तूफान या किसी महापुरूष की मृत्यु का सूचक है। रघुवीर सहाय इस लोक विश्वास को नया वर्ष नामक कविता में इस तरह प्रयोग करते हैं-

"कितने फूल खिले धरती पर कितने नभ में तारे टूटे कितनी शपचें सच-सच उतरी कितने सपने निकले झूठे।"[8]

आकाश में बिजली चमकने से संबंधित लोक में तमाम प्रकार के विश्वास पाए जाते हैं। कृष्ण जन्म के अवसर पर आकाश में बिजली चमकना शुभ माना गया है। रघुवीर सहाय इस लौक विश्वास को प्राण का प्रतीक मानते हुए इस चमक से जीवन की एक सुंदर कहानी लिखना चाहते हैं-

"जाग मेरे प्राण तमसाछन्न तन में तड़प उठ विद्युत सरीखा देह घन में।[9]

लोवा विश्वासों के अंतर्गत नदियों में स्नान करना पुण्यदायी माना जाता है। दृष्टव्य है कि स्नानार्थी रघुवीर सहाय की कविता में भजन गात हुये झूमते चले जा रहे हैं-

"सोती सड़कों को जगाते हैं नदी स्नान को जाने वाले अस्फुट शब्दों के भजन
झूलते हैं बलने के समय।"[10]

वैतरणी नदी के संबंध में साधारण जनता का यह विश्वास है कि मृत्यु के पश्चात मनुष्य की जीवात्मा को स्वर्ग या नर्क में जाने से पहले वैतरणी नामक नदी पार करनी पड़ती है। इसे पार करना बड़ा कठिन माना जाता है। लोक प्रचलित इस विश्वास को रघुवीर सहाय कविता में मुहावरे की तरह प्रयुक्त करते हैं-

"तुम तैर गऐ वैतरणी सा अंबर प्रशस्त/भरते-भरते निज आर्द्र अंक में भू समस्त।"[11]

वृक्षों से संबंधित लोक विश्वासों में बबूल वृक्ष को निकृष्ट तथा अपवित्र माना जाता है। इसमें फूल तथा फल भी लगते हैं परंतु इनका भी कोई उपभोक्ता नहीं होता है। बबूल की लफड़ी शव जलाने के काम में नहीं प्रयोग की जाती। रघुवीर सहाय इस बबूल के पेड़ को ऐसे फूल से आच्छादित लिखते हैं जिसमें काटे तो है लेकिन फूल में कोई सौंदर्य नहीं होता, जबकि प्रायः सारे सुंदर फूल कांटेदार वृक्षों में ही खिलते हैं-

"कांटा है पेड़ में तो वहीं कहीं फूल है लेकिन यहां तो सारा पेड़ ही बबूल है।"[12]

भारत तथा संसार के वनस्पति जगत में तुलसी के पौधे को सर्वाधिक श्रद्धा और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। "स्त्रिया घर में तुलसी का पौधा लगाकर उसकी पूजा करती हैं। वे प्रातः और सायंकाल इस पौधे के पास घी का दीपक जलाती हैं।

"सहसा तुलसी तले जल गया घी का दीया, आंचल कर कंधे पर
सादर शीश नवाया युवती वधू ने।"[13]

घरेलू जानवरों से संबंधित लोक विश्वासों में बिल्ली का रोना बड़ा अशुभ माना जाता है। दिल्ली यदि किसी का रास्ता काट दे तो यह अमंगलसूचक माना जाता है

"बिल्ली रास्ता काट जाया करती है प्यारी-प्यारी औरते हर'दम बक'बक करती रहती हैं।"[14]

पक्षियों से संबंधित लोक विश्वासों में कोयल का दर्शन शुभ माना जाता है। यात्रा के समय इसका दिखायी देना मंगलकारी है।

"सुबह-सुबह बुलबुल की कोयल की बोलियां आदतन हमको सुन पड़ती हैं कुछ सच्चा लगता चिड़ियों का विल्लाना है।"[15]

महीनों से संबंधित लोक विश्वासो में सावन महीने का सर्वाधिक जिक्र आता है। इस महीने में गाव में झूले डालकर स्त्रियां सावन का गीत गाकर उल्लास प्रकट करती हैं-

"तीखी आवाज में वे गीतों में गाकर सावन/अपनी किलकारियों से अपनी खिलखिलाहट से, गाता है कोई तो सावन के बीते जाने की।"[16]

फागुन महीने को मस्ती तथा आनंद का महीना माना जाता है। इस मास में बसंत के आगमन से सर्वत्र प्रसन्नता दृष्टिगोचर होती है -

"सब ऋतुओं का सुख खिंच आए इस फागुन के पास,

सरस फलों की मीठी आशाओं की उड़े सुवास नव आशाओं का मानव को बासंती उपहार, मिले, प्यार में सदा जीत हो नहीं कभी हो हार। [17]

कृषि से संबंधित, कृषि कर्म के अद्वितीय साधन हल को, अन्न का उत्पादक होने के कारण इसे समृद्धि और वैभव का सूचक माना जाता है-

"गाता है कोई भरे कंधों पे उठाए हुए हले, गाता है लो मेरे सब खेतों में बरसा पानी।"अपने इन चौड़े कंधों पर हल रखे हम/डेले मिट्टी के चौरस हों जब हो बोनी।[18]
त्योहारों के अंतर्गत हमारा दूसरा प्रमुख त्योहार है दीपावली इस दिन रात्रि के समय घर के प्रत्येक कोने में दीपक जलाया जाता है और ऐसा विश्वास किया जाता है इन दीपों के माध्यम से कुप्रवृत्ति रूपी अंधकार भाग जाता है-

"आज दीवाली आज दीवाली दीपों का त्योहार/जन-जन की शुभ अभिलाषाएं इन दीपों में दमके, जन-जन के दृढ निश्चय इनकी लपटें बन कर चमके, जल जाएं दुष्कर्म हमारे बिसरें पिछली बातें।"[19]
त्योहारों के अंतर्गत नववर्ष भी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। ईसाई लोगों के यहाँ नववर्ष बड़े ही उत्सव, उछाह और उल्लास का दिन होता है -

"नया वर्ष है स्वर्ण अक्षरों से लिखा था भुवन भाल पर...
नव निश्चय की नयी शक्ति नव रक्त रंगों में, नव आशा की स्फूर्ति चरण में भर लें, और पुरानी उन दुर्बलताओं को दूर फेंक दे।... नयी शक्ति है/नया रक्त है। मैं मनुष्य हूँ- मुझे हर्ष है/नया वर्ष है/नया वर्ष है।"[20]

लोक साहित्य के अंतर्गत ऋतु संबंधी गीतों में सावन के मनभावन महीने में कजली गाने की प्रथा है। सावन के महीने में गांव के बाहर बगीचों में झूले पड़ जाते हैं और स्त्रियां उन पर बैठकर झूलती हुई आनंद से कजली के गीत गाती है-

"देशी मल्हार व कजली की सुहानी ताने/आम की पेंड़ की डाली पर वो झूले का शमा। अनगिनत सदियों के सावन थे, समाए उसमें।"[21]

लोककथा तथा सुभाषितों के अंतर्गत घाघ और भड्डुरी की अनेक उक्तियां तथा कहावते प्रचलित हैं। रघुवीर सहाय ने भी लोक का संदर्भ लेते हुए सूक्तियों का अनेक-विध प्रयोग किया है।

"भूसी का कबिरा क्या करता / तत्व-तत्व रख लिया पछोर।"
"इसी नगरी में रहूंगा/रूखी रोटी खाऊंगा/ठंडा पानी पियूंगा।"[22]

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि लोकधर्मी चेतना जनसामान्य के जीवन, विश्वासों, परंपराओं, रीति-रिवाजों तथा सांस्कृतिक मूल्यों की सहज अभिव्यक्ति है। लोकजीवन की विविध अनुभूतियाँ साहित्य को व्यापक सामाजिक आधार प्रदान करती हैं। रघुवीर सहाय की कविताओं में लोकधर्मी चेतना का स्वरूप सूर्य, चंद्रमा, नक्षत्र, नदियों, वृक्षों, पशु-पक्षियों, ऋतुओं, कृषि-कर्म, त्योहारों एवं लोकविश्वासों के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। कवि ने लोक में प्रचलित मान्यताओं और परंपराओं को केवल वर्णन का विषय नहीं बनाया, बल्कि उन्हें अपनी काव्य-संवेदना से जोड़कर नवीन अर्थ प्रदान किए हैं। उनकी कविताओं में ग्रामीण परिवेश, लोकभाषा, लोकगीत और लोकानुभूतियों का सहज एवं स्वाभाविक चित्रण मिलता है। वे लोकजीवन की सामान्य घटनाओं में भी मानवीय संवेदना और सौंदर्य की तलाश करते हैं। इस प्रकार रघुवीर सहाय का काव्य लोकसंस्कृति और आधुनिक जीवनबोध के मध्य एक सार्थक सेतु निर्मित करता है। वस्तुतः उनकी लोकधर्मी चेतना उनके काव्य को जनसामान्य के निकट लाने के साथ-साथ उसकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रासंगिकता को भी स्थापित करती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द बच्चन सिंह, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली 2012,पृष्ठ-105
2.हिन्दी भक्ति साहित्य में लोक तत्व रवीन्द्र भ्रमर, भारती साहित्य मंदिर दिल्ली 1965, पृष्ठ-7, 8
3.रघुवीर सहाय रचनावली 1, संपादक सुरेश शर्मा राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2000,पृष्ठ-42
4.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-477
5.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-415
6.लोक संस्कृति की रूपरेखा कृष्णदेव उपाध्याय, लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद 1988 , पृष्ठ-52
7. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-450
8.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-426
9. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-406
10.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-45
11. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-471
12. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-500
13. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-469
14. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-69
15.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-283
16. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-458, 459
17.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-140
18. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-459
19.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-418, 419
20.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-426, 427
21.रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-458
22. रघुवीर सहाय रचनावली 1, पृष्ठ-81